का विषय बन गया था। देश की विविधता और बहुलता में विश्वास करने वाले चिंता व्यक्त कर रहे थे। लेकिन मुखर्जी ने आरएसएस को सच का आईना दिखाया।'

वहीं आरएसएस ने कहा है कि यहां संघ मुख्यालय में पूर्व राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी ने अपने भाषण में देश के गौरवशाली इतिहास की याद दिलायी और उन्होंने समावेशी, बहुलतावाद एवं विविधता में एकता को 'भारत की आत्मा' बताया। संघ ने कहा, 'मुखर्जी के भाषण ने राष्ट्र के गौरवशाली इतिहास की याद दिलायी... देश की 5,000 साल पुरानी सांस्कृतिक विरासत की याद दिलायी। हमारी राज्य प्रणाली भले ही बदल सकती है लेकिन हमारे मूल्य वही रहेंगे। उन्होंने समावेशी, बहुलवाद और विविधता में एकता को भारत की आत्मा बताया।''

प्रणब मुखर्जी पर सवाल उठाना ही गलत था

प्रणब दा 70 के दशक से राजनीति में हैं और कम से कम तीन चार दशक तो ऐसे रहे हैं जब वह केंद्रीय भूमिका में रहे। उन्हें सर्वाधिक प्रधानमंत्रियों के साथ काम करने का अनुभव है। वह साउथ ब्लॉक और नॉर्थ ब्लॉक स्थित देश के प्रमुख मंत्रालयों में मंत्री रहे, लोकसभा में सदन के नेता रहे, राज्यसभा में वर्षों लंबा उनका कार्यकाल रहा। देश के राष्ट्रपति पद पर रहते हुए उन्होंने नयी मिसालें कायम कीं। क्या ऐसे विद्वान और भारतीय राजनीति और उसके इतिहास की समझ रखने वाले व्यक्ति को बोलने का हक सिर्फ किसी एक पार्टी के मंच से है? क्या देश का पूर्व राष्ट्रपति किसी पार्टी से पूछ कर किसी कार्यक्रम में जायेगा? क्या देश के पूर्व राष्ट्रपति को कुछ बोलने से पहले किसी पार्टी से पूछना होगा कि वह क्या बोलें?

कांग्रेस ने नासमझी दिखाई

कांग्रेस को यह समझना चाहिए था कि जब व्यक्ति सक्रिय राजनीति में होता है तो उसके विचार कुछ और होते हैं लेकिन संवैधानिक पद पर रहने या उसके बाद वह दल का नहीं देश का हो जाता है और उसका प्रयास रहता है कि उसके विचार देश को एकजुट रखें। उदाहरण के लिए पूर्व राष्ट्रपति डॉ. कलाम का नाम लिया जा सकता है जो राष्ट्रपति पद पर कार्यकाल पूरा करने के बाद विभिन्न शिक्षाप्रद कार्यक्रमों में और संगठनों के मंचों पर जाते रहे। वह तो डॉ. कलाम किसी राजनीतिक दल से नहीं जुड़े थे वरना उनको लेकर भी विवाद पैदा किया जाता। डॉ. कलाम ने कई ऐसे कार्यक्रमों में भाग लिया था जोकि संघ या उससे जुड़े संगठनों ने आयोजित किये थे।

कांग्रेस नेताओं के दोहरे चेहरे उजागर

इस पूरे विवाद को खड़ा करने वाली कांग्रेस का दोहरा चेहरा सबके सामने आ गया है। प्रणब मुखर्जी के संघ मुख्यालय के दौरे से पार्टी नेता संजय झा, अभिषेक मनु सिंघवी और अहमद पटेल आदि ने ट्वीट करके कहा कि प्रणब दा से ऐसा करने की उम्मीद नहीं थी। वरिष्ठ नेता आनंद शर्मा ने तो यहां तक कह दिया कि जो तसवीरें नागपुर से आ रही हैं वह विचलित करने वाली हैं। लेकिन प्रणब मुखर्जी के भाषण के बाद इन नेताओं ने एकाएक रुख बदल लिया और प्रणब मुखर्जी की तारीफ करने लगे।

क्या मुखर्जी को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता नहीं?

कांग्रेस आरोप तो भाजपा पर लगाती है कि उसके राज में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता नहीं है और एक ही व्यक्ति की बात सुनी जाती है। लेकिन कांग्रेस को यहां सवाल खुद से पूछना चाहिए कि क्या देश के पूर्व राष्ट्रपति को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता नहीं है? क्या आरएसएस ने जिस तरह दूसरे के विचारों को सुनने की उदारता दिखाई है वैसा उदार रवैया कांग्रेस भी दिखा सकती है। संघ मुख्यालय में ऐसे व्यक्ति को बुलाया गया जिसका आरएसएस पर प्रतिबंध लगाने में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से योगदान था क्या कांग्रेस भी ऐसे किसी व्यक्ति को अपने मुख्यालय में भाषण देने के लिए आमंत्रित कर सकती है जिसने कांग्रेस को किसी तरह का राजनीतिक नुकसान पहुँचाया हो? असहिष्णुता की बात करने वाली कांग्रेस और कथित बुद्धिजीवियों को यह सोचना चाहिए कि असली असहिष्णुता तो तब थी जब मुखर्जी की आलोचना की जा रही थी।

मनमोहन से बहुत आगे निकल गये प्रणब मुखर्जी

यह साफ हो गया है कि कांग्रेस यही चाहती है कि उसके सभी नेता एक ही लाइन में चलें और जैसा आलाकमान चाहता है वैसा ही करें। लेकिन प्रणब मुखर्जी कांग्रेस में रहते हुए भी आलाकमान को विरोधी तेवर दिखा चुके हैं और अब संघ मुख्यालय जाकर उन्होंने साबित कर दिया है कि वह कांग्रेस में पूर्व प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह से कहीं योग्य थे। कांग्रेस यह जानती थी कि मनमोहन हर कहना मानेंगे लेकिन प्रणब मुखर्जी हर कहना शायद ही मानें। अब प्रणब ने ऐसा काम कर दिखाया है कि वह राजनीतिक रूप से मनमोहन सिंह से बहुत आगे निकल गये हैं। उन्होंने दिखा दिया है कि स्वतंत्र सोच भी कोई चीज होती है।

सबसे बड़ा सवाल आखिर संघ का विरोध क्यों?

आरएसएस जिसके लिए राष्ट्र प्रथम है और जो देश के ग्रामीण अंचलों में सेवा कार्य संचालित करता है उसके साथ यह छुआछूत जैसा व्यवहार क्यों? अपने इसी सेवा कार्य की बदौलत संघ की ताकत बढ़ती जा रही है जबकि उसके विरोधी जनता की अदालत में खारिज होते जा रहे हैं। संघ कोई आतंकवादी या उग्रवादी संगठन तो है नहीं कि उसके मुख्यालय जाना कोई अपराध है। जब आप कहते हैं कि वार्ता से ही मसले हल किये जा सकते हैं तो संघ से अगर कोई विवाद है भी तो उससे बात करके देखें। वह दृश्य सभी को याद हैं कि हुर्रियत जैसे वो संगठन जो हमेशा पाकिस्तानपरस्ती करते रहते हैं उनसे बात करने को कैसे कुछ राजनीतिक दलों के नेता हुर्रियत प्रमुख के घर गये थे और इन नेताओं को घर के दरवाजे से ही लौटा दिया गया था। केंद्र में चाहे जिस भी दल की सरकारें रहीं हों उसने पूर्वोत्तर के उग्रवादी संगठनों और नक्सलियों से वार्ता की पेशकशें की हैं। आप उग्रवादियों से वार्ता करेंगे लेकिन राष्ट्रवादियों से नहीं, यह कैसा दोहरा चरित्र है?

संघ के खिलाफ साजिशें होती रही हैं

संघ को विवादों में आखिर लाया कौन इस पर भी ध्यान देना चाहिए। बिना किसी प्रमाण के संघ को गांधीजी की हत्यारा बता देना और संघ पर विभाजन के बीज बोने का आरोप लगाना, हिन्दू आतंकवाद शब्द गढ़ना और उसके साथ संघ को जोड़ना यह सब कांग्रेस और कांग्रेसी सरकारों की साजिशें रही हैं क्योंकि संघ की जमीनी ताकत से सब वाकिफ हैं। खुद कांग्रेस अध्यक्ष राहुल गांधी भी संघ की मानहानि मामले का अदालत में सामना कर रहे हैं।

बहरहाल, इस पूरे प्रकरण में प्रणब मुखर्जी की बेटी शर्मिष्ठा मुखर्जी से अपने पिता को पहचानने में चूक हो गयी। प्रणब से उन्होंने अब भी कांग्रेस नेता जैसा व्यवहार करने की जो अपेक्षा की थी वह गलत थी। प्रणब दा पिता नहीं पूर्व राष्ट्रपति की भूमिका में थे। अपनी बेटी के राजनीतिक हितों की परवाह नहीं करते हुए उन्होंने देश के युवाओं को संघ के मंच से भारतीय राष्ट्रवाद का पाठ पढ़ाने का निर्णय कर नया इतिहास रच दिया है।

भाजपा को कश्मीर से ज्यादा राज्य की सज़ा से प्यार हो गया था

विश्व समुदाय ने इसे भारत का राजनीतिक आंतरिक मामला मानते हुए ज्यादा ध्यान नहीं दिया। केंद्र सरकार के सीमा पार आतंकियों के कैम्पों पर की गई सर्जिकल स्ट्राइक की कार्रवाई के बाद पार्टी को लगा अब पाकिस्तान को सबक मिल जाएगा। कश्मीर में आतंकवाद को समर्थन पर लगाम लग जाएगी। राष्ट्रवाद के चश्मे से इसे उपलब्धि बताते हुए भाजपा ने प्रचार-प्रसार करने में कसर बाकी नहीं रखी।

भाजपा की सत्ता की भूख जम्मू-कश्मीर मामले में जीभ जलाने वाली साबित हुई। महबूबा मुफ्ती की पार्टी पीडीपी से गठबंधन ही बेमेल था। धुर दक्षिण पंथी सोच वाले राजनीतिक दल का पीडीपी जैसी इस्लामिक सोच रखने वाली पार्टी से सत्ता के लिए तालमेल दोनों की मूल विचारधारा से भटकाने वाला था। भाजपा ने राष्ट्रवाद का नारा देकर जम्मू की बहुसंख्यक आबादी पर डोरे डालते हुए सत्ता में भागीदारी हासिल की थी। भाजपा विपक्ष में रहते हुए जम्मू-कश्मीर के आतंकवाद को देश की एकता और अखण्डता के लिए खतरा बताते हुए कांग्रेस और क्षेत्रीय दलों को कोसती रही। इसी के फलस्वरूप सत्ता हासिल हो सकी।

विपक्ष में रहते हुए आलोचना करना और सत्ता में आने पर उन्हीं मुद्दों का समाधान तलाशने में जमीन-आसमान का अंतर होता है। भाजपा को अब यह अच्छी तरह समझ में आ गया होगा। जब पाक समर्थित आतंकवाद को जड़मूल से उखाड़ने की बारी आई तो भाजपा बगले झांकने लगी। राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय मंचों पर भी भाजपा ने इस मुद्दे पर पाकिस्तान को दोषी ठहराते हुए कटघरे में खड़ा करने का प्रयास किया। विश्व समुदाय ने इसे भारत का राजनीतिक आंतरिक मामला मानते हुए ज्यादा ध्यान नहीं दिया। केंद्र सरकार के सीमा पार आतंकियों के कैम्पों पर की गई सर्जिकल स्ट्राइक की कार्रवाई के बाद पार्टी को लगा अब पाकिस्तान को सबक मिल जाएगा। कश्मीर में आतंकवाद को समर्थन पर लगाम लग जाएगी। राष्ट्रवाद के चश्मे से इसे उपलब्धि बताते हुए भाजपा ने प्रचार-प्रसार करने में कसर बाकी नहीं रखी। भाजपा का यह प्रयास हवाई किला ही साबित हुआ।

राज्यों के विधान सभा चुनावों में भाजपा ने इसे भुनाने में भी पूरा जोर लगाया। सर्जिकल स्ट्राइक के बाद भी पाक की नापाक हरकतों में कोई कमी नहीं आई। इसके बाद पाकिस्तान समर्थित आतंकियों ने यह जताने के लिए हमले ओर तेज कर दिए कि इससे उनके मंसूबों में कोई कमी नहीं आई है। सेना के कैम्पों पर हमले किए गए। आंतकियों की खेप बढ़ा दी गई। आतंकियों के विरूद्ध कार्रवाईयों में सुरक्षा बलों को पत्थरबाजों की भीड़ का सामना करना पड़ा। पाकिस्तान ने भी सर्जिकल स्ट्राइक से चिढ़ कर सीमा पर गोलाबारी तेज कर दी। यह दिखाने के लिए वह भारत से डरता नहीं, बेशक उसके घरेलू राजनीतिक हालात कितने ही अस्थिर क्यों न हों। हालांकि भारत की ओर से इसका मुंहतोड़ जवाब देने में कसर बाकी नहीं रही, किन्तु कश्मीर की समस्या सुलझने के बजाए और उलझ गई।

पीडीपी क्षेत्रीय दल होने के कारण भाजपा के सैन्य ऑपरेशन्स का उस तरह साथ और समर्थन नहीं कर सकी जितना कि भाजपा पैरवी करती रही। दोनों के वोट बैंक में अंतर है। पीडीपी का वोट बैंक कश्मीर तक ही सीमित है और भाजपा का जम्मू तक। भाजपा ने हमले बढ़ाकर और पीडीपी ने लगभग बचाव की मुद्रा में आकर वोट बैंक मजबूत करने का काम किया। पीडीपी ने जीना यहां, मरना यहां की तर्ज पर आतंकियों के अलावा उन्हें संरक्षण देने वालों पत्थरबाजों से भी नरमी बरती। इससे भी हालात में सुधार नहीं हुआ।

स्थानीय संरक्षण से आतंकियों के हमले बढ़ते गए। हालांकि स्थिति को काबू में पाने का दावा करने के लिए भाजपा और केंद्र सरकार मारे गए आतंकियों की संख्या गिनाती रही। कश्मीर में विफलता पर पर्दा डालने के लिए यह आंकड़ा पेश किया जाता रहा कि पिछली सरकारों की तुलना में ज्यादा आतंकवादी मारे गए हैं। इसके बावजूद स्थिति दिनोंदिन बिगड़ती गई। सैन्य सख्ती से स्थिति नियंत्रण में नहीं आने पर भाजपा ने थक-हार कर दूसरा दांव खेला। रमजान के अवसर पर सैन्य कार्रवाई पर एकतरफा विराम लगा दिया। चूंकि आतंकियों की डोर पाकिस्तान से बंधी है और हुर्रियत कांफ्रेंस जैसे अलगाववादी संगठनों के नेता पाक की कठपुतली के अलावा कुछ नहीं हैं, अत: सैन्य कार्रवाई स्थगित करने का दांव भी खाली चला गया।

आतंकवादियों के पाक स्थित आकाओं ने कार्रवाई पर विराम को खारिज कर दिया। पाकिस्तान किसी भी सूरत में कश्मीर में शांति कायम किए जाने के खिलाफ है। इससे पाकिस्तान की सत्ता कमजोर पड़ जाती है। यही वजह रही कि रमजान के दौरान भी आतंकियों ने सुरक्षा बलों और मुखबरी करने वालों पर हमले जारी रखे। ईद के दिन तक हमले होते रहे। पानी सिर से गुजरने की नौबत आने पर रमजान के पूरा होते ही भाजपा वापस सैन्य कार्रवाई करने पर विवश हो गई। कश्मीर के हालात जिस तेजी से बेकाबू होते जा रहे थे, उससे पीडीपी की तो कुछ नहीं पर भाजपा की देश भर में किरकिरी जरूर हो रही थी। देशभक्ति और राष्ट्रवाद के जुमलों पर तंज कसा जाने लगा। भाजपा अपने ही बनाए हुए जाल में उलझने लगी। इस फजीहत से बचने के लिए अंतत: भाजपा के पास पीडीपी से समर्थन वापस लेकर राज्यपाल शासन लागू करने के अलावा कोई दूसरा चारा शेष नहीं रह गया था।

सवाल यह भी है कि आखिरकार भाजपा के रणनीतिकार इसका अंदाजा लगाने में विफल कैसे हो गए कि कश्मीर और शेष देश में राजनीति के पैमाने अलग-अलग हैं। बहुमत नहीं होने पर भी राज्यों में जोड़तोड़ बिठा कर सत्ता हासिल करने का दांव कश्मीर में काम नहीं करेगा। अब पार्टी पीडीपी से अलग होकर बेशक इसका प्रायश्चित करे किन्तु आगामी लोकसभा और विधान सभा चुनावों में मतदाताओं को इसका जवाब देना आसान नहीं होगा कि जोर-शोर से कश्मीर का मुद्दा उठाने वाली भाजपा सत्ता मिलने पर इसका कोई समाधान तलाशने की बजाए बैकफुट पर कैसे आ गई।